

भारतीय साहित्य में नारी

सारांश

नारी त्याग और तपस्या की जाज्वल्यमान विभूति है। इन्हीं दो तत्वों के सम्मिलन से आर्य नारी का स्वरूप संगठित हुआ है। नारी जीवन का मूल मंत्र है। त्याग और इस मंत्र को सिद्ध करने की क्षमता उसे प्रदान की है। तपस्या ने सायण के अनुसार नारी शब्द का अर्थ है—नरों का उपकार करने वाली। ऋग्वेद में नारी शब्द “नृ” धातु से निकला बताया गया है। “नृ” को प्रयोग वीरता का काम करना, दान देना तथा नेतृत्व करने के अर्थ में हुआ है। स्त्री का नारी नाम इन्हीं विशेषताओं के कारण पड़ा है। कालिदास का युग संस्कृत साहित्य का श्रेष्ठतम युग था। उस युग में पुत्री का प्रमुख कार्य आश्रम के वृक्षों का सिंचन फल-फूल आदि का संग्रह करना था। तपस्वियों की कन्यायें वृक्षों के छाल के वस्त्र पहनती थीं।

मुख्य शब्द : भारतीय नारी, प्राचीन भारतीय साहित्य।

प्रस्तावना

प्राचीन काल से ही भारतीय सामाजिक व्यवस्था में स्त्रियों का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। वैदिक साहित्य के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि स्त्री को पुरुष का पूरक और अर्द्धांगिनी माना जाता था। प्रत्येक धार्मिक कृत्य स्त्री की उपस्थिति एवं सहभागिता से ही पूर्ण होता था। यह आदर्श महाकवि कालिदास के काव्यों में विशेष रूप से दिखाई देता है। कालिदास की ममता और सहानुभूति नारी जाति के प्रति सहज रूप से उमड़ पड़ी है। कन्या, नारी, पतिव्रता, माता, महिषी, प्रेमिका, सपत्नी जैसे विविध रूपों में नारी का चित्रण हुआ है। अमरकोश में नारी के लिए स्त्री योशिता, अबला, नारी, सीमन्तिनी, वधू, वामा, वनिता, महिला, अंगना, कामिनी, प्रमदा, मानिनी, कान्ता, ललना, रमणी, रामा, उत्तमा, भामिनी जैसे तेइस पर्यायवाची शब्दों का प्रयोग हुआ है।¹ जिसमें नारी के विशेष रूपों और गुणों की झलक मिलती है।

कन्या के रूप में कुमार सम्भव में उमा का दिव्य वर्णन और अभिज्ञानशकुन्तलम् में शकुन्तला का चित्रण दर्शनीय है। उमा के कौमार्य तप एवं साधना का वर्णन नितान्त मञ्जुल एवं चित्ताकर्षक है। शकुन्तला Wordsworth की स्नबल की भाँति प्रकृति की पुजारी है जिसका वृक्षों, लताओं, पशुओं और पक्षियों से सहज स्नेह है। वह कुलपति कण्व की पोशिता कन्या है। सभी उसे प्यार करते हैं। ममता एवं सहानुभूति रखते हैं। आर्य संस्कृति के प्रतिनिधि के रूप में कालिदास ने नारी का चित्रण किया है। कन्या रूप में पार्वती और शकुन्तला का जो चित्रण हुआ है उसमें भारतीय कन्याओं के तपस्यामय त्यागमय कौमार्य का दिव्यतम रूप उभरकर सामने आता है। पार्वती ने तपस्या के बल पर ही अपना मनोरथ सफल किया है—

इयेष सा कर्तुमवन्ध्यरूपतां, समाधिमास्थाय तपोभिरात्मनः।

अवाप्यते वा कथमन्यथा द्वयं तथाविधिं प्रेम पतिश्च तादृशः।²

शाकुन्तल में कन्या के प्रति सहज ममता, प्रगाढ़ प्रेम आदि भाव निरूपित है।

तपोधन कण्व की प्रेम—विह्वलता, विकलता अत्यन्त कारुणिक है।

कन्यावियोगजन्य पीड़ा का अनुभव करते हुए वे कह पड़ते हैं—पीडयन्ते गृहिणः कथं न कन्या विप्लेषदुखैर्नवैः? परन्तु वे आश्वस्त भी हैं क्योंकि कन्या एक प्रकार से पराया धन होती है और उसे योग्य पति को सौंप करही पिता निश्चिन्त होता है—

अथो हि कन्या परकीय एव, मामद्य सम्प्रेश्य परिग्रहीतुः।

जातो ममायं विशदः प्रकामं, प्रत्यर्पितन्यास इवान्तरात्मा।³

नारी का पत्नी रूप कालिदास ने शकुन्तला, सीता आदि के चरित्रों में दर्शाया है। पतिव्रता नारी का पत्नीत्व, मातृत्व, त्यागमय, तपोमय चरित्र पूर्णतया स्पष्ट हुआ है। शकुन्तला एवं सीता दोनों को संयोग की अपेक्षा वियोग की अग्नि-परीक्षा में अधिकाधिक त्याग, तपस्या, संयम, समर्पण आदि गुणों का परिचय देना पड़ा है। पतिपरायणा सती सीता ने गर्भावस्था में वनवास देने वाले श्रीराम के उस दारुण कर्म में भी पति का दोष नहीं माना है, अपितु उन्हें



बिन्दु सिंह

एसोसिएट प्रोफेसर/अध्यक्षा,
संस्कृत विभाग,
कर्मक्षेत्र स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
इटावा

ही कहा है। उन्हें इसके पीछे कर्मवाद के सिद्धान्तानुसार अपने ही पापकर्मों का फल जैसा लगता है –

कल्याणबुद्धेरथवा तवायं न कामचारो मयि शंकीयः।

ममैव जन्मान्तरपातकानां विपाक विस्फूर्जथुरप्रमेयः।¹

सीता का इसी सोच के अनुकूल मारीचाश्रम में पुनर्मिल के समय शुकन्तला ने भी दुष्यन्त को दोष न देकर अपने ही पापकर्मों के फल का दोष माना था। दाम्पत्य जीवन में इस प्रकार का पातिव्रत एवं समर्पण भाव आज के समाज के लिए कितना प्रासंगिक एवं प्रेरणाप्रद है यह विचारणीय है। शुकन्तला ने कहा था—आर्यपुत्र! इस समय हमारे पर्वजन्म का कोई ऐसा पाप उदय हो गया था, जिससे आप जैसे सहृदय भी मेरे प्रति निर्दयी बन बैठा था (शाकुन्तल-सप्तम अंक)।

कालिदास दाम्पत्य प्रेम के उन्नायक कवि हैं। सुखमय दाम्पत्य जीवन के आदर्श के पोषक हैं। दुष्यन्त और शुकन्तला के गान्धर्व विवाह का भी कण्व ने अनुमोदन किया है। विवाह के लिए माता-पिता समाज और धर्म की मर्यादा के अनुपालन की आवश्यकता होती थी। उमा-महेश्वर विवाह में शास्त्रीय एवं लौकिक विधियों का बड़ा ही मनोरम वर्णन हुआ है।⁵ कालिदास ने बहु विवाह प्रथा का वर्णन अवश्य किया है, परन्तु उनका आदर्श एकपत्नीव्रत में ही दिखायी पड़ता है जिसके आदर्श श्रीराम एवं अज हैं। गृहस्थ जीवन की गाड़ी को पति-पत्नी अपनी निष्ठा, स्नेह वृत्ति समर्पण भावना और सूझ-बूझ से चलाते हैं। डॉ० राजबली पाण्डेय ने लिखा है—

Kalidasa pictures his female characters specially his heroines

*As the very image of love, sacrifice and even self effacement.*⁶

पति-पत्नी के साथ धर्म, अर्थ, काम के सम्पादन में समान रूप से सहभागिनी होती थी। वह गृहलक्ष्मी कही जाती थी। वह पति का प्रेम और आदर-सम्मान करती थी। वह अपने पति के लिए केवल प्रेमिका ही नहीं थी, अपितु मन्त्री, सखा, शिष्या जैसी कितनी भूमिकाओं में सहायिका बनती थी।⁷ इस समाज में और विशेषकर गृहस्थ जीवन में नारी की प्रतिष्ठा स्पष्टतः झलकती है।

जब नारी माता बन जाती थी तब वह और अधिक आदरणीय एवं पूज्य बन जाती थी। पिता के साथ माता की भी आज्ञा शिरोधार्य मानी जाती थी। बल्कि पिता की अपेक्षा माता अधिक गौरवशालिनी थी— पितुः दशगुणा माता गौरवेणातिरिच्यते। जब श्रीराम लंका-विजय के बाद अयोध्या आते हैं तो सर्वप्रथम माताओं से मिलकर उनका आदर-सत्कार करते हैं। (रघुवंश-14) पितृ-भक्ति और मातृ-भक्ति सन्तान के लिए आवश्यक थी।

कालिदास ने अभिज्ञानशकुन्तलम् में इस बात का भी उल्लेख किया है कि पति के देहान्त के बाद उसकी पत्नी उसकी सम्पत्ति की स्वामिनी होनी चाहिए नहीं तो उसके गर्भ में पलने वाला शिशु भी उसका उत्तराधिकारी हो सकता है। समुद्री व्यापारी धनमित्र की मृत्यु का समाचार आने पर जब उसकी सम्पत्ति को मंत्री राज्य की सम्पत्ति घोषित करना चाहता है तब राजा कहता है कि धनवान होने के कारण उसकी कई पत्नियाँ होंगी। पता लगाओं उनमें से किसी के गर्भ में सन्तान पल रही है। गर्भस्थ शिशु ही उसकी सम्पत्ति का उत्तराधिकारी होगा।⁸ इस प्रसंग से सिद्ध होता है कि पत्नी को पति की

सम्पत्ति के उत्तराधिकार का हक प्राप्त था। उसके गर्भस्थ शिशु का भी पैतृक सम्पत्ति पर अधिकार था।

नारी स्वतंत्र जीवन बिता सकती थी। वह चाहे तो बिना विवाह किये ब्रह्मचारिणी के रूप में भी रह सकती थी। कण्व के आश्रम में बहुत सी ब्रह्मचारिणी नारियाँ वर्णित की गयी हैं।⁹ बौद्ध धर्म से प्रभावित होकर भिक्षुणियाँ भी विहारों में रहती थीं और स्वतंत्र विचरण कर सकती थीं। ऐसी स्वतन्त्रता केवल आश्रमवासिनी नारियाँ, भिक्षुणियों अथवा परिव्राजिकाओं को ही नहीं प्राप्त थीं, अपितु रानियों, विवाहिताओं अथवा भद्र महिलाओं को भी प्राप्त थी। ऐसी स्वतन्त्रता कालिदास के काव्यों में वर्णित हैं।¹⁰ फिर भी नारी को नर से अलग रहने की व्यवस्था ही प्रशस्त थी। कालिदास ने 'अवरोधन' और 'अन्त-पुर' का उल्लेख किया है।¹¹ यह उनकी संरक्षा एवं सुरक्षा के लिए भी अपेक्षित था।

कालिदास के काव्य में सती-प्रथा की अनिवार्यता की बात नहीं देखी जाती। बहुत सी विधवायें अपने पतियों की मृत्यु के पश्चात् जीवनयापन करती चित्रित हैं।¹² गर्भिणी नारियाँ को भी सती होने से मना किया गया था।¹³ कुमारसम्भव में कामदेव के भस्म हो जाने पर रति ने जो उद्गार व्यक्त किये हैं, उससे स्पष्ट होता है कि पति की मृत्यु के पश्चात् पत्नी को सती होना ही चाहिए परन्तु वह स्वयं जीवन धारण करती है। इससे स्पष्ट होता है कि सती-प्रथा अनिवार्य नहीं थी, यद्यपि इसे आदर्श माना जाता था।¹⁴ महाभारत में पाण्डु की दो पत्नियों में से एक माद्री सती हो जाती है, जबकि कुन्ती पुत्रों के लिए जीवन धारण करती है। दशरथ की तीनों रानियों को भरत ने सती होने से मना कर दिया और वे मान गयीं।

निष्कर्ष

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि भारतीय साहित्य में नारी अपना विशिष्ट महत्त्व रखते हुए पवित्रता, साधुता, विषुद्धता की प्रतीक, त्याग, तपस्या, सहनशीलता की मूर्ति तथा माता, पत्नी, पुत्र, भगिनी, प्रेयसी, दासी एवं परिचारिका आदि अनेक रूपों में दिखाई देती ह। नारी में शक्ति सेवा, उदारता, परपीडन, कातरता, सहृदयता आदि अन्य उदस्त भावनाओं का समावेश रहता है। जहा मातृ रूप में वह अपनी जनन शक्ति के कारण विश्व की अक्षय निधि और त्याग, तपस्या, निःस्वार्थ, साधना, वत्सलता, ममता की साक्षात् देवी है, कहीं पत्नी के रूप में पुरुष के जीवन की सुन्दर प्रेरक, गृह की सफल संचालिका, उसकी परामर्शदात्री तथा सहचरी के रूप में दृष्टिगत होती है। कन्या के रूप में प्रेम, ममता, वात्सल्य व स्नेह की पात्र होती है।

सन्दर्भ

1. अमरकोश-(11-6-2-4)
2. कुमार संभवम्-5/1
3. अभिज्ञान शकुन्तलम्-4/22
4. रघुवंश-14/62
5. कुमारसंभव-6-7सर्ग
6. Vikramaditya of Ujjayini=P.170
7. रघुवंश-8/67
8. अभिज्ञानशकुन्तल-6/22
9. अभिज्ञानशकुन्तल-6/22
10. मालविकाग्निमित्र में दृष्टव्य
11. रघुवंश-1/32, 4/68
12. कुमारसंभव-4/1
13. रघुवंश-19/56
14. कुमारसंभव-4/32-46